

Floods Despite Dams

Dinesh Kumar Mishra

बाढ़ तो फिर भी आयेगी

दिनेश कुमार मिश्र



BARH MUKTI ABHIYAN, BIHAR

बाढ़ मुक्ति अभियान, बिहार

FLOODS DESPITE DAMS

Dinesh Kumar Mishra

Background

Bihar is the one of the most flood prone state of India. According to the report of the National Commission on Floods (1980), 16.5 per cent of the total flood affected area of the country is located in Bihar while 22.1 per cent of the flood affected population in India lives in the alluvial plains of this state. That suggests a heavy concentration of flood affected people over a smaller area. According to recent estimates (1987), 56.5 per cent of the floods affected people in the country belong to Bihar. Of this, about 76 per cent population lives in North Bihar which has an area of about 5.4 million hectares and a total population of 5.23 millions (2001 census) with a population density of about 1,000 persons per Sq. Kms.

North Bihar is interspersed with eight major river basins namely, the Ghaghra, the Gandak, the Burhi Gandak, the Bagmati, the Adhawara group of rivers, the Kamala, the Kosi, and the Mahananda. All these rivers drain their waters into the Ganga which acts as a master drain. But for the Burhi Gandak, and the Mahananda, all other rivers have

their origin in Tibet or Nepal. The Burhi Gandak originates from Chautarwa chaur in West Champaran and the Mahananda originates near Kurseong, in West Bengal, and most of their catchment area is located in Nepal. All these rivers bring a lot of detritus with their waters as they debauch into the plains from the Himalayas which is still in its nascent stage of formation and is just a loose heap of soil. These rivers erode the soil very easily and transport it to the plains. As the rivers descend down to the plains, the flow velocity decreases considerably which results in the deposition of the sediments and formation of the delta. The deposited sediments act as an impediment to the river's flood waters and the rivers cut across these deposits, carve a new path for themselves and meander. The process of the delta formation continues still and so does the meandering of the rivers and the flooding of the plains. The floods renew the fertility of the soil every year and that must have attracted the early settlers to this area which was known for its abundance of water and assured crops and hence the high population density. The Hindu scriptures are full for praise

बाढ़ तो फिर भी आयेगी

— दिनेश कुमार मिश्र

पृष्ठभूमि :

बिहार की गिनती भारत के सर्वाधिक बाढ़ प्रवण क्षेत्रों में होती है। राष्ट्रीय बाढ़ आयोग (1980) के अनुसार देश के कुल बाढ़ प्रवण क्षेत्र का 16.5 प्रतिशत हिस्सा बिहार में है जिस पर देश की कुल बाढ़ प्रभावित जनसंख्या की 22.1 प्रतिशत आबादी बसती है। इसका मतलब यह होता है कि अपेक्षाकृत कम क्षेत्र पर बाढ़ से त्रस्त ज्यादा लोग बिहार में निवास करते हैं। 1987 की बाढ़ के बाद किये गये अनुमान के अनुसार यह पाया गया कि बाढ़ प्रवण क्षेत्र का प्रतिशत सारे देश के सन्दर्भ में बढ़कर 56.5 हो गया है और इसका अधिकांश भाग उत्तर बिहार में पड़ता है जिसकी जनसंख्या 5.23 करोड़ (2001) है तथा क्षेत्रफल 54 लाख हेक्टेयर है। यहाँ की 76 प्रतिशत जमीन बाढ़ से प्रभावित है जबकि जनसंख्या घनत्व लगभग 1,000 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है।

उत्तर बिहार में आठ मुख्य नदियाँ हैं जिनके नाम घाघरा, गण्डक, बूढ़ी गण्डक, बागमती, अधवारा समूह की नदियाँ, कमला, कोसी तथा महानन्दा हैं। यह सारी नदियाँ गंगा में समाहित हो जाती हैं। बूढ़ी गण्डक और महानन्दा को छोड़ कर इन सारी नदियों का उद्गम नेपाल या तिब्बत में है। बूढ़ी गण्डक,

पश्चिम चम्पारण जिले के चौतरवा चौर से निकलती है जबकि महानन्दा पश्चिम बंगाल में करसियांग के पास से निकलती है। इन दोनों नदियों का भी अधिकांश जलग्रहण क्षेत्र नेपाल में पड़ता है। यह सभी नदियाँ अपने प्रवाह में हिमालय से अत्यधिक मात्रा में मिट्टी और रेत बहा कर लाती हैं। हिमालय पर्वतमाला अपने निर्माण के प्रारम्भिक दौर से गुजर रही है और एक तरह से धुरधुरी मिट्टी का ढेर है। इस तरह की मिट्टी का नदियाँ बड़ी आसानी से कटाव कर देती हैं और मिट्टी/रेत को मैदानों में पहुँचा देती हैं। नदियाँ जब पहाड़ों से मैदानों में उतरती हैं तो उन का वेग एकाएक कम हो जाता है। पानी, मिट्टी और रेत के साथ एक बड़े क्षेत्र पर फैल जाता है और नदी के कछारों का निर्माण होता है। कछारों में जमा होने वाली रेत/मिट्टी अगली बरसात के मौसम में नदी के प्रवाह की रुकावट बनती है-जिसे काट कर नदी अपना नया रास्ता बना लेती है। नदियों का धारा परिवर्तन इसी तरह से होता है। हिमालय से आने वाली नदियों के कछार के निर्माण की प्रक्रिया रुकी नहीं है इसलिये उनका धारा परिवर्तन भी बन्द नहीं होता है और इसीलिये बाढ़ें भी आती रहती हैं। बाढ़ की वजह से कृषि भूमि पर नई मिट्टी पड़ती है और उसे पोषक तत्व मिलते हैं। यही कारण

and veneration of the rivers which are addressed to as the 'mothers of the world'.

The Kosi

This river has a catchment area of about 74,500 Sq. Kms. Of this, around 85 per cent is located in Tibet and Nepal and the remaining portion lies in India. The river has a total length of 468 Kms. of which 248 Kms. lies in the Indian territory. The maximum observed peak flow in the river is reported to be 25,880 Cumecs (1968) at Barakhshetra, in Nepal, and the annual average run-off is to the tune of 68,282 million cubic meters. The river carries a silt load of about 9,495 Hect. Meters annually. The average rainfall in the Indian portion of the Kosi catchment area is 1276 mm.

The Kosi debauches into the plains near Chatra in the Saptari district of Nepal and enters Bihar near Bhimnagar in the Supaul district. Notorious for its vagaries, the river joins the Ganga near Kursela in Katihar district of Bihar. The floods of the river Kosi are most devastating as compared to the other rivers of Bihar. There is not an inch of land in the districts of Supaul, Saharsa, Madhepura, Araria, Kishanganj, Purnea and Katihar over which the Kosi has not once flowed. The river has shifted westward in past two hundred and fifty years by 112 Kms. Such has been the erratic course of the river over the ages that the British called it the "Sorrow of Bihar."

The Initiatives on Flood Control

The British, after their occupation of India, tried to tame the Damodar, the 'Sorrow of Bengal' as they called it, in the middle of the nineteenth century with the help of embankments and failed miserably in controlling the river. They, then, refrained from taming any of the Himalayan rivers, as their behaviour was equally unpredictable, till they left India in 1947. Despite many proposals put forward from time to time, the British did not touch the Kosi and wanted it to be left to its own devices and their legacy continued till 1953 when it was decided to embank the Kosi after a debate of about hundred years against embanking of the river. Without going into the details of this debate, suffice here to say that when a heavily silt laden river is restrained between the embankments, the silt that accompanies the flood waters and would have spilled over a large area, now gets restricted between the embankments, thus, continuously raising the bed level of the river. This silt has a fertilizing value, too, and the flood protected countryside is deprived of this benefit because of the embankments. The ever rising bed level of the river demands that the embankments, too, should be raised accordingly.

Secondly, the natural drainage into the river is blocked because of the embankments and the rain water, which would have flowed into the river, on its own, stagnates

रहा होगा कि शुरू-शुरू में लोग बाढ़ वाले इलाकों में बसे होंगे। यहाँ की उपजाऊ मिट्टी और पानी की बहुतायत ने उन्हें आकर्षित किया होगा। बाढ़ वाले क्षेत्रों में जनसंख्या घनत्व का ज्यादा होना बाढ़ों का प्रतिफल है। हिन्दू शास्त्र नदियों की स्तुति और वन्दना से भरे पड़े हैं। इनमें उन्हें 'विश्व की माताओं' के रूप में मान्यता मिली है।

कोसी :

इस नदी का जलग्रहण क्षेत्र 74,500 वर्ग कि०मी० है जिसका 85 प्रतिशत नेपाल और तिब्बत में पड़ता है। बाकी का हिस्सा भारत (बिहार) में है। इस नदी की कुल लम्बाई 468 किलोमीटर है जिसमें से भारत में इस नदी की लम्बाई 248 किलोमीटर है। इस नदी में सर्वाधिक प्रवाह बराह क्षेत्र (नेपाल) में 25.880 घनमेक (1968) देखा गया है। वर्ष में पानी की हर साल लगभग 6,828 करोड़ घनमीटर मात्रा इस नदी से होकर प्रवाहित होती है और हर साल इस नदी में औसतन 9,495 हेक्टर मीटर मिट्टी/रेत आती है। नदी के भारत वाले जलग्रहण क्षेत्र में औसतन 1276 मिलीमीटर वर्षा होती है।

कोसी नेपाल के सप्तरी जिले में चतरा के पास पहाड़ों से मैदान में उतरती है और लगभग 50 किलोमीटर का सफर तय करके भीमनगर (जिला-सुपौल, बिहार) के पास भारत में प्रवेश करती है। धारा परिवर्तन के लिये प्रसिद्ध यह नदी कटिहार जिले में कुरसेला के पास गंगा में मिल जाती है। कई धाराओं में बहने वाली इस नदी की बाढ़ का अपना रंग हुआ करता था। उत्तर बिहार के सुपौल, सहरसा, मधेपुरा, अररिया, किशनगंज, पूर्णियाँ और कटिहार जिलों की एक इंच भी ज़मीन ऐसी नहीं है जिस पर से होकर कोसी कभी बही न

हो। पिछले ढाई सौ वर्षों में यह नदी 112 किलोमीटर पश्चिम की ओर खिसक गई है। कोसी का व्यवहार सदियों से बड़ा अनिश्चित रहा है और अंग्रेज़ों ने इसे 'बिहार के शोक' की संज्ञा दी हुई थी।

कोसी को नियंत्रित करने के पूर्व प्रयास :

भारत में जब अंग्रेज़ों का राज आया तो उन्होंने उन्नीसवीं सदी के मध्य में तटबन्धों के माध्यम से दामोदर नदी को, जिसे वह 'बंगाल का शोक' कहते थे, नियंत्रित करने का काम किया। इस प्रयास में वह पूरी तरह से असफल हुये। इसलिए उन्होंने हिमालय से आने वाली नदियों को बाढ़ नियंत्रण के लिये कभी हाथ नहीं लगाया क्योंकि उन नदियों का व्यवहार भी दामोदर की ही तरह अप्रत्याशित था। दामोदर से मुंह की खाने के बाद वह 1947 तक इन नदियों से बचते रहे। इस वीच कोसी को नियंत्रित करने के लिये कितने ही प्रस्ताव उनके पास आये पर उनका मानना था कि कोसी को नियंत्रित नहीं किया जाना चाहिये और तटबन्ध के जरिये तो हरगिज़ नहीं। उनकी इस विचारधारा पर 1953 तक अमल हुआ और इसके पीछे नदी को तटबन्धों में कैद न करने की सौ साल से ज्यादा की बहस थी। इस बहस के विस्तार में पड़े बिना यहाँ इतना ही बता देना काफी होगा कि नदियाँ अपने पानी को गाद के साथ फैलाव क्षेत्र पर फैलाती हैं। अपने प्रवाह में भारी मात्रा में रेत/मिट्टी लाने वाली नदी को जब तटबन्धों में जकड़ लिया जाता है तो उनका विस्तार सीमित हो जाता है और वह सारी मिट्टी/रेत जो अन्यथा एक बड़े इलाके पर फैलती, वह उन तटबन्धों के बीच जमा होकर नदी के तल को ऊँचा करने लगती है। इसके साथ ही तटबन्धों के बाहर की जमीन को नदी के पानी के कारण मिलने वाले पोषक

outside the embankments causing water logging in the protected area. This is further aggravated by seepage through the embankments. In case of a tributary joining the main river, the embankments block its passage and the tributary will either back flow into the protected area or will have to flow parallel to the main river, outside the embankments. The main river then may be flanked by two rivers, on either side of the embankments. This will spell the need for a sluice gate at the confluence of the two rivers. When constructed, such sluice gates cannot be opened during the peak rainy season for the fear that the water in the main river may spill back into the tributary. Hence sluice-gate or no sluice-gate, the flood situation in the country side is not going to change. Also, the sluice-gates are known to get jammed in the sand deposited due to the ever rising bed of the embanked river.

When the sluice-gates cease to function, the flood affected people demand that the tributaries are also embanked. Should that be done, the rainwater gets trapped between the embankments of the main river and the tributary and inundates new areas hitherto unknown to flooding.

The only course left to get rid of this locked water is to pump it out into the main river or the tributary. To cap it all, no embankment can ever be guaranteed against breaching and should a breach take place, those living

between the water-locked area will meet their watery grave. Thus, it is a vicious' circle and once walked into the trap, it becomes impossible to come out. For these reasons, many engineers do not treat embankments as an effective tool to handle floods. Unfortunately, it takes time to get a feel of the discrepancy of the technology and by the time this is revealed to the affected population, it is too late.

A vast section of engineers, however, believes that when a river is embanked, the area available for the passage of water is reduced and the velocity of the river flow is increased. The increased velocity of water erodes the river banks and dredges its bottom and the cross-sectional area of the river is increased allowing more passage of water and, thereby, reducing the floods. In technical circles, the debate, whether the embankments add to the flood or reduce it, is yet to be settled. But just as both the arguments, for and against the embankments, are thoroughly convincing, engineers use them to justify or discard a scheme depending on the prevailing social and political compulsions and their views being a technical matter cannot be challenged by the lay persons.

When the politicians decide that the embankments should not be built, the engineers push the former argument and when the politicians want the embankments to be built, the latter arguments are put forward. If the time is to be

तत्व भी नहीं मिल पाते हैं। लगातार ऊपर उठते रहने वाले नदी के तल के कारण तटबन्धों को भी ऊँचा करना पड़ता है।

इसके अलावा तटबन्धों के कारण नदी के स्वाभाविक जल-ग्रहण की प्रक्रिया में भी बाधा पड़ती है। वर्षा का वह पानी जो कि अपने आप नदी में आ जाता अब वह तटबन्धों के कारण बाहर अटक जाता है और सुरक्षित क्षेत्रों में जल जमाव उत्पन्न करता है। तटबन्धों से होकर नदी के पानी के रिसाव के कारण सुरक्षित क्षेत्रों में जल जमाव की समस्या और भी ज्यादा जटिल हो जाती है। अगर कभी नदी की कोई सहायक धारा नदी से संगम करती हो तो मुख्य नदी पर बने तटबन्ध उसका मुहाना बन्द कर देते हैं। अब सहायक धारा का पानी या तो सुरक्षित क्षेत्रों में पीछे की ओर लौटेगा या फिर तटबन्धों के बाहर नीचे की ओर बहने पर मजबूर होगा। अगर सहायक धारायें नदी के दोनों किनारे पर मिलती हों तो दोनों तटबन्धों के बाहर ऐसी धारायें बहेंगी। ऐसी परिस्थिति में यह मांग उठेगी कि संगम स्थल पर एक स्लुइस गेट बनाया जाय। इस स्लुइस गेट के साथ दिक्कत यह होगी कि बरसात भर इसे बन्द रखना पड़ेगा क्योंकि अगर कभी स्लुइस गेट खुला हो और मुख्य धारा में अधिक पानी आ जाय तो स्लुइस गेट होकर बहुत सा पानी सहायक नदी से होता हुआ सुरक्षित क्षेत्रों में घुस जायेगा। इसलिये वर्षा के समय इन्हें बन्द ही रखना पड़े तो स्लुइस गेट बनें या न बनें, कोई खास फ़र्क नहीं पड़ने वाला है। इसके अलावा निर्माण के कुछ ही वर्षों के अन्दर नदी के तल में जमा होती हुई रेत/मिट्टी स्लुइस गेट को ही जाम कर देती है।

अब अगर स्लुइस गेट भी काम न करें तब अगली मांग उठती है कि

सहायक नदी पर भी तटबन्ध बना दिये जायें। अगर ऐसा कर दिया जाय तो एक नई मुसीबत पैदा होती है और वह यह कि अब वर्षा का पानी मुख्य नदी और सहायक नदी के तटबन्धों के बीच फंस जाता है और उन इलाकों को डुबाता है जहाँ अभी तक बाढ़ नहीं आती थी। तब एक ही रास्ता बचता है कि दोनों तटबन्धों के बीच फंसे इस पानी को पम्प करके दोनों में से किसी नदी में डाल दिया जाय। इसके अलावा इस बात की गारन्टी कोई नहीं दे सकता कि नदी पर बना हुआ तटबन्ध कभी टूटेगा नहीं। अगर इन दोनों में से कोई भी तटबन्ध टूट जाता है तो बीच में रहने वाले लोगों की जल-समाधि हो जायेगी। इसलिये तटबन्धों के माध्यम से बाढ़ सुरक्षा खोजना एक ऐसा दुष्चक्र है कि एक बार अगर कोई इस व्यूह में फंस जाय तो बाहर निकलना असम्भव हो जाता है। इन कारणों से बहुत से इंजीनियर तटबन्धों को बाढ़ नियंत्रण के लिये उपयोगी नहीं मानते। दुर्भाग्यवश, तकनीक के इस छलावे को समझने में देर लगती है और जब तक प्रभावित लोगों की समझ में यह प्रपंच आये, काफ़ी देर हो चुकती है।

दूसरी तरफ इंजीनियरों की एक अच्छी खासी जमात यह मानती है कि जब नदी पर तटबन्ध बनाये जाते हैं तो पानी का प्रवाह क्षेत्र कम हो जाता है और अगर पानी की एक समान मात्रा कम क्षेत्र से होकर प्रवाहित किया जाय तो उसका वेग बढ़ जाता है। पानी के बढ़े हुये वेग में किनारों के कटाव करने की अधिक क्षमता होती है और यह इंजीनियर ऐसा मानते हैं कि बदली परिस्थितियों में नदी की चौड़ाई और गहराई बढ़ जायेगी और उसके साथ ही नदी से ज्यादा पानी गुजरने लगेगा और बाढ़ स्वाभाविक रूप से कम हो जायेगी। तकनीकी हलकों में यह बहस कि नदी पर बने तटबन्धों के कारण बाढ़ कम

bought and the project is to be deferred indefinitely, insufficiency of the data comes to the rescue of the engineers who can explain any and every situation that they are faced with. In the early and the middle parts of the nineteenth century, the British repaired and extended the existing embankments to protect the flooded areas and, thus, enhanced their revenue. When they found that maintaining the embankments was one of the most 'harassing duties' and that the cost of relief and rehabilitation was mounting, they stopped building and repairing the embankments. Their engineers used the earlier set of the arguments to justify the stand of their government. That explains why the British engineers were against the embankments and the Indian engineers preferred them because the political bosses wanted flood protection and did not mind construction of embankments for the purpose. Many engineers, who had opposed the construction of embankments during their tenure in the office during the British regime, changed their stance when the Kosi was proposed to be embanked as India attained freedom.

The Kosi was embanked during 1955-60 and that paved the way for embanking all other major rivers listed above in North Bihar and the result is anybody's guess. Bihar had only 160 Kms. of the embankment length in 1952, before the promulgation of the country's first flood control policy, and the flood prone area of the state was only 2.5

million hectares then. It has now 3,430 Kms. long embankments along its rivers, in 2002, and the flood prone area of the state stands at 6.88 million hectares and to achieve this feat, Rs. 1.327 billions were spent in the state till date. The embankment length in Bihar had reached 3465 kilometers in 1992 but some 11 kilometers of this was washed away in 2000-01 followed by another 24 kilometers in 2001-02. Obviously, the investments in the flood control sector in the state are doing more harm than good. However, it is not proper to put all the blame for this debacle on to the embankments along the Bihar rivers alone. There are other factors, too. Reckless construction of roads and, to an extent, railway lines, without any regard to drainage has also contributed to it. The construction of village roads under various employment generation programmes, without any regard to the drainage aspect of it, has also contributed significantly towards drainage congestion leading to enhanced floods and prolonged water logging. The canals of the Kosi and the Gandak projects have also done their bit in aggravating the situation by cutting the drainage lines, and through seepage. The land profile in North Bihar is almost flat and has a ground slope of only 11 Cms per kilometer in lower reaches, along the Ganga and any obstruction to the rainwater flow is enough to create waterlogging. The frequent breaches in the river embankments add insult to the injury. The

होती है या बढ़ती है—अभी तक फैसले का इन्तजार कर रही है। तटबन्धों के पक्ष और विपक्ष में दिये जाने वाले दोनों तर्क तकनीकी रूप से इतने पुष्ट और प्रभावशाली हैं कि इंजीनियर लोग इनका उपयोग किसी भी योजना का अनुमोदन करने या उसे ध्वस्त करने में बड़ी आसानी से कर लेते हैं। उन्हें बस इतना ही विश्लेषण करना रहता है कि तत्कालीक सामाजिक परिस्थितियों की मांग क्या है और शासक वर्ग क्या चाहता है। एक बार यह स्पष्ट हो जाये तो वह अपना तर्क सामने रखते हैं और उनकी राय को चुनौती नहीं दी जा सकती क्योंकि वह इंजीनियर हैं।

जब राजनीतिज्ञ यह फैसला करते हैं कि तटबन्ध नहीं बनने चाहिये तब इंजीनियर पहले दिये गये तर्कों का आश्रय लेते हैं। जब वह यह तय करते हैं कि तटबन्ध बनने चाहिये तो इंजीनियर बाद वाला तर्क देते हैं। अगर किसी परियोजना को टाल देना हो तो वह लोग आंकड़ों की कमी का वास्ता देते हैं। इस प्रकार परिस्थिति चाहे जैसी भी हो वह उसका समना बड़ी आसानी से कर लेते हैं। अंग्रेजों ने पहले उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वाह्न और मध्य में तटबन्ध इसलिये बनाये क्योंकि वह बाढ़ से सुरक्षा देने के नाम पर लोगों से लगान वसूल कर सकें और जब उनके लिये तटबन्धों का रख-रखाव नामुमकिन हो गया और राहत तथा पुनर्वास के खर्च बढ़ने लगे तब उन्होंने तटबन्धों से तौबा कर ली। सरकार के इस कदम को उचित ठहराने के लिये उनके इंजीनियरों ने पहला वाला तर्क दिया। आजादी के बाद जब राजनेताओं को लगा कि बाढ़ से सुरक्षा मिलनी चाहिए और उसके लिये तटबन्धों से उन्हें परहेज नहीं था तब दूसरे प्रकार के तर्क इंजीनियरों के काम आये।

बहुत से इंजीनियरों ने तो अपने अंग्रेजों के समय के सेवा काल में तटबन्धों

का खूब विरोध किया था मगर जब कोसी पर तटबन्ध बनाने के लिये राजनैतिक दबाव पड़ने लगा तो वह खुलकर तटबन्धों के पक्ष में बोलने लगे।

1955-60 के बीच कोसी नदी पर तटबन्ध बना दिये गये और इसके साथ ही उत्तर बिहार की बाकी नदियों पर भी तटबन्ध बनाने का मार्ग प्रशस्त हो गया और उन पर भी तटबन्ध बन गये। इसका समुचित परिणाम सामने आया। 1952 में, जब भारत में पहली बाढ़ नीति को मंजूरी नहीं दी गई थी, बिहार में नदियों के किनारे बनाये गये तटबन्धों की कुल लम्बाई 160 किलोमीटर थी और प्रान्त का बाढ़ प्रवण क्षेत्र 25 लाख हेक्टेयर था। इस वक्त (2002) राज्य में नदियों के किनारे बने तटबन्धों की लम्बाई 3,430 किलोमीटर है तब राज्य का बाढ़ प्रभावित क्षेत्र 68.8 लाख हेक्टेयर हो गया है। इस बीच में बाढ़ नियंत्रण पर राज्य में 1327 करोड़ रुपये खर्च हुये। बिहार में तटबन्धों की लम्बाई 1992 में 3,465 किलोमीटर तक जा पहुँची थी मगर इसमें से 2000-01 में 11 किलोमीटर और 2001-02 में 24 किलोमीटर बह गई। ज़ाहिर है कि बिहार में बाढ़ नियंत्रण के क्षेत्र में निवेश फाँयदे की जगह नुकसान पहुँचा रहा है। इस विसंगति का सारा दोष नदियों के किनारे बने तटबन्धों को नहीं दिया जा सकता क्योंकि इसके कारण दूसरे भी हैं। जल-निकासी की व्यवस्था किये बगैर सड़कों और रेल-लाइनों के अंधा-धुंध निर्माण का इस गिरावट में अपना योगदान रहा है। केवल रोजगार पैदा करने के उद्देश्य से बनाई गई ग्रामीण सड़कों ने भी जल-निकासी और बाढ़ समस्या को बढ़ाया है क्योंकि इनमें से होकर जल-निकासी का कोई इन्तजाम आमतौर पर नहीं होता। कोसी तथा गण्डक परियोजना की नहरों ने सतही पानी के प्रवाह में बाधा पैदा की है तथा उनसे होने वाले रिसाव ने भूमिगत जल की सतह को ऊपर किया है। उत्तर बिहार का मैदानी

prestigious Kosi embankments, too, have breached many times and their notable failures were seen in 1963, 1968, 1971, 1980, 1984, 1987 and 1991. The breach of 1984 was most serious of these accidents which had wiped out eleven villages, inundated some 196 and had rendered half a million people homeless. In the floods of 1987, there were 104 breaches on the river embankments of Bihar and the march continues.

From embankments to high dams in Nepal

The high dam on the Kosi was first proposed in 1937 when the official line of thinking was opposed to embankments and was tilted heavily in favour of improving the drainage and removing all the impediments in the flow path on rain water. The British were not very enthusiastic about any cooperation from Nepal and, it seems, did not pursue the matter and the proposal was revived only in 1945 when the Government of Bihar proposed embanking of the Kosi to the central government which rejected the scheme. Before leaving the country, the colonial rulers had successfully planted the seeds of the proposed high dam on the Kosi at Barakhshetra in Nepal as the central government had plainly rejected the embankment scheme. A formal announcement about damming the Kosi at Barakhshetra, in Nepal, was made at Nirmali (district Supaul) on the 6th April, 1947 by C. H. Bhabha, then member of planning at centre. The plan was changed

subsequently in favour of embankments on the Kosi but the ghost of the Barakhshetra dam haunts the planners ever since. Whenever there is a heavy flood in Bihar, no time is lost in proclaiming that the solution to the flood problems of Bihar lies in the High Dam on the Kosi. This ritual is observed even when the floods occur in basins other than that of the Kosi. Writing of letters in newspapers, demanding the dam, assuring the flood victims of speedy implementation of the Barakhshetra Dam scheme, sending high power delegations to Nepal, meetings in Kathmandu and New Delhi etc. is what occupies the headlines during August to November every year and then as the rivers subside, the debate, too, takes the back-seat only to be revived in next August. This is happening since 1956, when the construction of the Kosi embankments was half way through and massive flooding took place during that season. People are repeatedly told that the Kosi embankments are only a temporary solution to the problem faced by them and that the real solution lies in the said dam in Nepal.

The Barakhshetra Dam

The Barakhshetra Dam as proposed in 1947, was supposed to irrigate 1.2 million hectares of land, produce 3300 MW of hydroelectric power, and free the Kosi area from floods at an estimated cost of rupees one billion. The cost estimate grew to Rs. 1,770 million in 1952 when the

क्षेत्र लगभग सपाट है और गंगा के किनारे लगी पट्टी में तो जमीन का ढाल 11 सेन्टीमीटर प्रति किलोमीटर तक मिलता है। ऐसे में पानी के रास्ते की हल्की सी भी रुकावट जल-जमाव का कारण बनती है। नदियों के तटबन्धों में अक्सर पड़ने वाली दरारें कोढ़ में खाज की स्थिति पैदा करती हैं। बहुचर्चित कोसी तटबन्ध 1963, 1968, 1971, 1980, 1984, 1987 तथा 1991 में टूट चुके हैं। इन दुर्घटनाओं में 1984 वाली दरार सबसे घातक थी जिसने 11 गाँवों को नेस्त-नाबूद कर दिया, 196 गाँवों को डुबाया और लगभग साढ़े चार लाख लोगों को बेघर बना दिया था। बिहार की 1987 वाली बाढ़ में विभिन्न नदियों के तटबन्धों में 104 दरारें पड़ीं और तटबन्ध टूटने की विनाश-यात्रा अभी थमी नहीं है।

तटबन्धों से कोसी हाई डैम की ओर :

कोसी पर बाढ़ नियंत्रण के लिये पहली बार 1937 में एक बड़े बांध का प्रस्ताव उस समय किया गया था जबकि सरकारी नीति जल-निकासी की दशा सुधारने तथा पानी के रास्ते में आने वाली तमाम रुकावटों को खत्म करने की थी। अंग्रेज सरकार इस मसले पर नेपाल से किसी प्रकार के सहयोग पाने के प्रति आशावान नहीं थी इसलिये उन्होंने नेपाल से इस प्रस्ताव पर कोई खास पहल नहीं की। इस बांध पर पहली बार 1945 में कोई गम्भीर बयान आया जबकि बिहार सरकार ने कोसी नदी की पूरी लम्बाई पर तटबन्ध बनाने का प्रस्ताव केन्द्र सरकार के पास भेजा था जिसने उसे स्पष्ट रूप से नकार दिया था। जाते-जाते ब्रिटिश हुकूमत बाढ़ से बचाव के लिये बड़े बांध का बीज बो गई और इस तरह कोसी पर बराह क्षेत्र बांध की बात उठी। इसकी औपचारिक

घोषणा 6 अप्रैल 1947 को निर्मली (जि० सुपौल), बिहार में तत्कालीन केन्द्रीय योजना मंत्री सी० एच० भाभा ने की थी। बाद में घटनाक्रम कुछ ऐसा बदला कि कोसी पर तटबन्ध ही बनाने पड़ गये मगर बराह क्षेत्र का भूत तभी से योजनाकारों पर अपनी छाया डाले हुये है। जब कभी भी बिहार में बाढ़ आती है तब बिना कोई समय खोए यह बयान सरकारी हलकों से दिया जाता है कि बिहार की बाढ़ समस्या का समाधान बराह क्षेत्र बांध ही है। यह बात तब भी कही जाती है जबकि बाढ़ कोसी के अलावा दूसरी नदियों में भी आती है। तब समाचार पत्रों में पत्र आने लगते हैं कि इस बांध के निर्माण पर शीघ्र कार्यवाही हो, सरकार की तरफ से आश्वासन दिया जाता है कि वह बराह क्षेत्र बांध के निर्माण प्रति सजग और गम्भीर है, फिर काठमाण्डू और नई दिल्ली के बीच उच्चस्तरीय प्रतिनिधि मण्डल की आवाजाही होती है। अगस्त से लेकर नवम्बर के बीच इस तरह की खबरें समाचारपत्रों में भरी रहती हैं और जैसे ही नदियाँ शान्त होती हैं, यह सारा कर्मकाण्ड भी शान्त हो जाता है अगले साल के अगस्त महीने तक के लिये। यह षट्पराग 1956 से चल रहा है जबकि कोसी तटबन्धों के निर्माण के समय ही नदी में भयंकर बाढ़ आ गई थी। लोगों को तभी से बार-बार यह बताया जाता है कि तटबन्ध बाढ़ समस्या का अस्थायी समाधान है और असली समाधान तो नेपाल में प्रस्तावित इस बांध में ही है।

बराह क्षेत्र बांध :

1947 में बराह क्षेत्र में प्रस्तावित बराह क्षेत्र बांध से भारत और नेपाल के 12 लाख हेक्टेयर क्षेत्र पर सिंचाई होने का अनुमान था। इस से 3,300 मेगावाट बिजली पैदा होती और निचले क्षेत्रों में बाढ़ से सुरक्षा देने का वायदा

scheme was shelved and the embankments on the Kosi were sanctioned in 1953. The scheme was revived seriously, once again, after the floods of 1971.

The geologists, however, had their doubts with the structural safety of the dam, vis a vis, earthquakes and this is, apparently, not resolved yet. A statement to this effect was given by Anugrah Narain Singh on the 22nd September 1954, in Bihar Vidhan Sabha that the Government was concerned about the safety and security of the people living downstream and it was in this background that the embankments were being built.

Some proposals were prepared about this proposed dam from time to time, and according to the Second Irrigation Commission of Bihar (1994), the cost of the dam had gone up to Rs. 40,740 million in 1986. Going by the statements of the politicians and the engineers appearing in the press, the dam will now cost around Rs. 35 to 40 thousand crore. The question is, where are we going to get so much money from? Obviously, many international financial institutions are encouraging the government to go ahead with the plans. In case of the Barahkshetra dam, it is the Global Infrastructure Fund of Japan which is doing this job. With liberalization and opening up of the market, the multinationals have treaded in the business and are likely to construct these dams. In the present circumstances, these MNCs will built

the dam, pay taxes to Nepal and sell power to India, the price of which is yet to be settled. And that India will purchase the power that will be produced, has not yet been agreed upon. There are apprehensions that the production cost of the power will be too high for the Indian consumer to bear. It is for this reason that the MNCs are ensuring counter guarantee from the concerned governments. These MNCs have no interest in flood control, which is a welfare measure, and MNCs are known for not having interest in people's welfare.

Floods despite dams

It is important to discuss some other related issues also. The catchment area of the Kosi near the site number 13 near Barahkshetra in Nepal, where the dam is proposed to be built, is 59,550 Sq. Kms. There is an increase in the catchment area of the Kosi from site number 13 to Bhimnagar Barrage by 2266 Sq. Km. and the catchment area of the river lying below this point is 11,410 Sq. Kms. Thus a catchment area of nearly 13676 Sq. Kms. will lie below the proposed Barahkshetra dam. The catchment area of the Bagmati is only slightly less than this and it is equivalent to the catchment area of twice that of the Kamala. That is to say, a mass of water equivalent to one Bagmati or two rivers of the size that of the Kamala would flow below the Barahkshetra dam site whether the dam is built or not. One

किया गया था। तब इस बांध की लागत 100 करोड़ रुपये थी। प्राथमिक सर्वेक्षण और अध्ययन के दौरान 1952 में इस बांध की अनुमानित लागत 177 करोड़ रुपयों तक जा पहुँची जबकि इस योजना का ख्याल छोड़ दिया गया और 1953 में कोसी पर तटबन्ध के निर्माण की स्वीकृति दी गई। इस योजना पर गम्भीरतापूर्वक पुनर्विचार एक बार फिर 1971 में हुआ जब बिहार एक भयंकर बाढ़ की चपेट में आया।

इस बांध की संरचनात्मक सुरक्षा पर भूगर्भ-वैज्ञानिकों में मतभेद रहा है क्योंकि इसका निर्माण उस क्षेत्र में होगा जहाँ बड़े भूकम्प आने की सम्भावना है और यह गुथी अभी तक सुलझी नहीं है। जब कोसी नदी पर तटबन्ध बनाये जाने का प्रस्ताव किया गया था तो यह बात बिहार विधानसभा में उठी कि क्यों बराह क्षेत्र बांध के स्थान पर तटबन्ध बनाये जा रहे हैं। तब सरकार की तरफ से 22 सितम्बर 1954 को बिहार विधान सभा में अनुग्रह नारायण सिंह ने बयान दिया था कि सरकार प्रस्तावित बांध के निचले क्षेत्रों में रहने वाले लोगों की सुरक्षा के प्रति चिन्तित है और इसलिये इस बांध पर काम नहीं हो सकेगा और इस पृष्ठभूमि में तटबन्धों का निर्माण करना पड़ रहा है।

इस बांध के निर्माण के लिये कुछ प्रस्ताव बनाये गये हैं। बिहार के द्वितीय सिंचाई आयोग (1994) में योजना का जो स्वरूप बताया गया है उसके अनुसार इस बांध की अनुमानित लागत 4,074 करोड़ रुपये (1986) हो गई है। आजकल जो राजनीतिज्ञों और इंजीनियरों द्वारा बयान दिये जाते हैं उसके अनुसार इस बांध की अनुमानित लागत 35 से 40,000 करोड़ रुपयों तक पहुँच गई है। प्रश्न यह उठता है कि इतना पैसा हम कहाँ से लायेंगे? जाहिर है, बहुत सी

अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थायें सरकारों को यह काम करने के लिये प्रोत्साहित कर रही हैं। बराह क्षेत्र बांध पर जापान की ग्लोबल इन्फ्रास्ट्रक्चर फण्ड की नजर है। उदारीकरण के इस दौर में यह संस्थायें अब केवल कर्ज की व्यवस्था न करके स्वयं निर्माण में उतरना चाहती हैं। जैसे हालात अब बन रहे हैं उनके अनुसार यह कम्पनियों बांध बनायेंगी। नेपाल को उसकी रॉयल्टी और टैक्स देंगी तथा भारत को बिजली बेचेंगी जिसकी दरें अभी तय नहीं हो पा रही हैं और भारत यह बिजली खरीदेगा ही, इस पर भी कोई समझौता नहीं हो पा रहा है। इन बात का अंदेशा व्यक्त किया जाता है कि इन बांधों से पैदा होने वाली बिजली इतनी महंगी होगी कि भारतीय उपभोक्ता उसकी कीमत नहीं अदा कर पायेगा और इसीलिये यह बहुराष्ट्रीय कम्पनियों अपने निवेश पर सरकार से लाभ की गारन्टी चाहती हैं। इन बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का बाढ़ नियंत्रण जैसे कल्याणकारी कामों में कितनी रुचि होगी यह कह पाना मुश्किल है पर यह निश्चित है कि यह कम्पनियाँ जन-कल्याण का काम नहीं करतीं।

बाढ़ तो फिर भी आयेगी :

इसके अलावा भी कुछ अन्य महत्वपूर्ण मुद्दे हैं जिनकी विवेचना होनी चाहिये। नेपाल में बराह क्षेत्र के पास जिस साइट नं० 13 पर बांध का प्रस्ताव किया गया है वहाँ कोसी का जल-ग्रहण क्षेत्र 59,500 वर्ग किलोमीटर है। साइट नम्बर 13 से भीमनगर बराज के बीच में कोसी का जलग्रहण क्षेत्र 2266 वर्ग किलोमीटर बढ़ जाता है। बराज के नीचे कुरसेला में कोसी के गंगा से संगम तक नदी का जलग्रहण क्षेत्र 11,410 वर्ग किलोमीटर और बढ़ जाता है। इस तरह से बराह क्षेत्र बांध के नीचे भी कोसी में 13,676 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र

who has seen these rivers in spate can well imagine the amount of water that flows in these rivers. Today, this is exactly the mass of water that is blocked outside the eastern and western embankments of the Kosi and causes severe waterlogging there.

On the western embankment side of the Kosi, the Barakhshetra dam will have no impact on the flow of the rivers like Ghordah, Panchi, Dhokra, Kharak, Bihul, Bhutahi Balan, Gehuma and Supain and there is not going to be any let up in the flood situation west of western Kosi embankment even after the construction of the Barakhshetra dam as the origin and outfall of these rivers are located outside the proposed dam. For the same reason, on the eastern side of the eastern embankment, the Fariani Dhar, Harsankhi Dhar, Goraho Dhar, Dhemura Dhar, Tilawe Dhar, Hareli Dhar, Basanwara Dhar, Sursar Dhar, Sapni Dhar, Beldaur Dhar, Chausa Char, Lachchaha Dhar and Gai Dhar will not be affected by the said Barakhshetra Dam. There is going to be no change in the situation in the areas that are allegedly protected from the flood of the Kosi, subsequent to the construction of embankments, even after the Barakhshetra dam is built.

This is the only refrain of engineers and politicians for past 55 years that the embankments will be effective only when the dam is built at Barakhshetra. This will not be

possible for those living outside the embankments, as we have seen, and it will never be possible for those living in 338 villages within the embankments. It is said that once, the dam is built, the entire sand and the silt will be trapped inside the reservoir; the water released from it will be absolutely silt free; the river will become stable and the embankments will be kept in a fine condition. For one thing, the water released from the dam will never be silt free nor would it be possible to block the entire flow of the river during the rainy season. The river will continue to meander within the embankments and erosion of the banks will also not stop. And if the river water is left free to flow during the rains and the reservoir is filled only at the end of the season in order to maintain its longevity, the situation within the embankments will remain what it is today. And a danger will persist, even if the reservoir is filled, when the rains are over. In case there is a heavy downpour in October, as it happened in 1968 or in 1978, the gates of the dam will have to be opened and flash floods will have to be faced. Normally, no dam will be able to stop the incidence of floods after the month of September. The floods of West Bengal (1978) despite the dams of DVC in the month of October, and more recently, in 1999, the floods in the Narmada basin in Bhopal and Hoshangabad, despite the existence of the Barna, Bargi and the Tawa dams are some of the examples. A vast

से पानी आता है। बागमती नदी का जल-ग्रहण क्षेत्र इससे थोड़ा सा ही ज्यादा है और कमला नदी का जल ग्रहण क्षेत्र इसका लगभग आधा है। इसका सीधा मतलब यह होता है कि बराह क्षेत्र बांध के निर्माण के बाद भी बागमती नदी के प्रवाह जितना या कमला के प्रवाह से दुगुना पानी बांध के नीचे किसी भी हालत में बहेगा। जिसने भी इन दोनों नदियों को उफनते देखा है वह इस पानी का आसानी से अन्दाजा लगा सकता है। आजकल यही पानी कोसी के पूर्वी और पश्चिमी तटबन्ध के किनारे जमा होता है और जल-जमाव को स्थायी बनाता है।

पश्चिमी तटबन्ध के पश्चिम में बहने वाली पांची, धोकरा, घोरदह, खड़क, बिहुल, भुतही बलान, गेहुमां और सुपैन जैसी नदियों पर बराह क्षेत्र बांध का कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। कमला-बलान और बागमती नदियाँ भी इसके प्रभाव क्षेत्र से बाहर हैं। इस तरह से पश्चिमी तटबन्ध के पश्चिम में बाढ़ परिस्थिति पर बराह क्षेत्र बांध बनने के बाद भी कोई अन्तर नहीं पड़ेगा क्योंकि इन नदियों का उद्गम और उनका अन्तिम बिन्दु दोनों ही, बराह क्षेत्र बांध के बाहर होंगे। ठीक इसी तरह से पूर्वी तटबन्ध के पूर्व में फरियानी धार, हरसंखी धार, गोरहो धार, हरेली धार, बंसवारा धार, सौरा धार, सपनी धार, बैलदौर धार, चौसा धार, लछहा धार, सुरसर धार, तिलाबे धार और गाई धार के प्रवाह पर बराह क्षेत्र बांध का कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। इन क्षेत्रों में कोसी नदी पर तटबन्ध बनाये जाने के बाद तथाकथित रूप से बाढ़ से सुरक्षित इलाकों में बराह क्षेत्र बांध के बनने या न बनने से कोई फर्क नहीं पड़ने वाला है।

इंजीनियरों का समुदाय तथा राजनीतिज्ञ पिछले 55 वर्षों से इसी बात की दुहाई देते आये हैं कि तटबन्ध सक्षम रूप से तभी काम करेंगे जब बराह

क्षेत्र बांध बना लिया जायगा। जैसा कि हमने ऊपर देखा है कि यह तटबन्धों के बाहर रहने वाले लोगों के लिये जल-जमाव की स्थिति में कोई फर्क नहीं पड़ेगा और यह प्रस्तावित बांध उनके लिये कतई फायदेमंद नहीं होगा, उसी तरह कोसी तटबन्धों के बीच बसे 338 गाँवों के लगभग 8 लाख बाशिन्दों पर भी इसका कोई अलग प्रभाव नहीं पड़ेगा। ऐसा बताया जाता है कि बांध बन जाने के बाद सारी मिट्टी/रेत उसके अन्दर रुक जाती है और बाहर छोड़ा जाने वाला पानी गाद मुक्त होगा और इसलिये नदी स्थिर रहेगी तथा तटबन्धों को भी चुस्त-दुरुस्त हालत में रखा जायेगा। पहली बात तो यह है कि न तो बरसात में नदी में आने वाले सारे पानी को रोक पाना मुमकिन है और न ही जो पानी बांध से छोड़ा जायेगा वह कभी गाद मुक्त होगा और इसलिये तटबन्धों के अन्दर नदी की धारा बदलती रहेगी और कटाव भी जारी रहेगा। नदी के पानी को बरसात भर बहने दिया जाय और वर्षा के अन्त में ही जलाशय भरा जाये तब तो जो परिस्थिति आज है वह बनी ही रहेगी। अगर बरसात के अन्त होते-होते तक जलाशय भर लिया जाता है तब भी खतरा समाप्त हो जायेगा, इसकी कोई गारन्टी नहीं है क्योंकि 1968 या 1978 जैसी बाढ़ें अक्टूबर के महीने में आई थीं। ऐसी स्थिति में जलाशय तो भरा रहेगा और पानी बरसने पर सारे फाटक खोल देने पड़ेंगे। तब ऊपर से पानी बरसेगा और बांध के पानी का भी मुकाबला करना पड़ेगा। सितम्बर के बाद आने वाली बाढ़ में इस बांध की कभी भी कोई उपयोगिता नहीं होगी।

पश्चिम बंगाल की अक्टूबर 1978 की बाढ़ दामोदर घाटी निगम के बांधों के कारण और उसके बावजूद आई थी। 2000 में पश्चिम बंगाल में इस घटना की पुनरावृत्ति हुई और दामोदर घाटी के बांध खामोशी से तमाशा

section of people feel that these floods were caused due to excessive release of flood waters from these dams. West Bengal floods were repeated in 2000 and the DVC dams remained a mute spectator. Releases from Hirakud reservoir on the Mahanadi (2001) had devastated vast coastal area of Orissa and mere existense of dams is no guarantee for the safety against floods. The officials always have a set reply that the flood would have been worse had the dams not existed. Those living between the embankments will face all the more danger in such a situation. And, ironically, it will be the very same people who will be encouraged most to raise their voices for the construction of the dam at Barahkshetra. It is just to remind that there are some 338 villages with a population of about 800,000 located within the Kosi embankments and they will be the first victims of any release from the dam.

Only explanations and excuses

So far as the flood problem goes, there is going to be no change in it whether the Barahkshetra dam is built or not. But the flood control continues to be its only plank of publicity. If we have a look at the 1986 estimate of the dam, the mist of confusion is dispelled. Out of an estimated outlay of Rs. 4,074 Crores, Rs. 2,677 Crores have been earmarked for power generation and Rs. 1,347 Crores for irrigation. Only the rest of Rs. 50 Crores have been allocated

for watershed development and soil conservation. This is the only component of work to reduce the silt load and amounts to only 1.3 per cent. of the total cost. This will be used as an excuse by the future generation engineers in case of non-functioning of the dam vis a vis flood control that their predecessors did not take up afforestation, watershed management and silt control seriously. The kind of flood control one expects from these dams will be achieved only through regulation of the dam and there appears to be little provision for the development of the watershed.

Now, it is said that the embankments would function best in combination with the Barahkshetra dam, the engineers would put forth the argument after 50 or 100 years from hence, that but for the works of afforestation and watershed development, the dam would have functioned well and they will press for it. But the river used to change its course even when the forests were not disturbed. They will say then that just because the hills are geologically unstable, the rivers are carrying high amount of sediments. There is no role of forests in preventing earthquakes and landslides. Will the earthquakes that make the Himalayan range unstable, spare the dam? The fact is that the building lobby will neither run short of excuses nor there will be any dearth of jobs for them. When all the excuses fail, 'global warming' will come to the rescue of the engineers. The plans to interconnect

देखते रह गये। इधर हाल में सितम्बर 1999 में नर्मदा घाटी में भोपाल और होशंगाबाद में जो बाढ़ आई थी वह भी बरगी, बारना और तवा बांधों की वजह से और उनके बावजूद आई थी। वहाँ भुक्त-भोगियों का मानना है कि बाढ़ इन बांधों द्वारा अत्यधिक पानी छोड़ने के कारण आई थीं। जुलाई 2001 में उड़ीसा के तटीय क्षेत्रों में बाढ़ आने का मुख्य कारण महानदी पर बने हुये हीराकुड बांध से छोड़ा जाने वाला पानी था। ऐसे मौकों पर अधिकारियों का एक नपा-तुला जवाब होता है कि अगर बांध नहीं रहे होते तो तबाही और भी ज्यादा हुई होती। ऐसी परिस्थितियों में तटबन्धों के अन्दर रह रहे लोगों पर खतरा पहले से ज्यादा बढ़ा हुआ रहेगा मगर विडम्बना यह है कि वही लोग सबसे आगे बढ़ कर बराह क्षेत्र बांध की मांग करेंगे। हम फिर याद दिला दें कि कोसी तटबन्धों के बीच 338 गाँव फंसे हैं जिनकी कुल आबादी लगभग 8 लाख है। और बराह क्षेत्र बांध से होने वाली किसी भी दुर्घटना या पानी छोड़े जाने के पहले शिकार यही लोग होंगे।

बहाना दर बहाना :

इस तरह बराह क्षेत्र बांध बने या न बने, इस इलाके में बाढ़ की स्थिति यथावत बनी रहेगी लेकिन प्रचार-प्रसार के लिये हमेशा बाढ़ नियंत्रण के लाभ का ही नाम लिया जायेगा। अगर हम इस बांध के 1986 वाले प्राक्कलन पर एक नज़र डालें तो बाढ़ नियंत्रण के नाम पर लोगों को भरमाने की धुंद थोड़ी सी छंटती है। बांध की कुल लागत 4074 करोड़ रुपयों में से 2,677 करोड़ रुपये विद्युत उत्पादन तथा 1,347 करोड़ रुपये सिंचाई पर खर्च किये जाने का प्रावधान है। बाकी बचे 50 करोड़ रुपये जल-छाजन और भूमि संरक्षण योजनाओं

पर खर्च किये जायेंगे। जलाशय में आने वाली गाद को रोकने या कम करने के लिये इतना ही आवंटन है जो कि कुल लागत का 1.3 प्रतिशत है। जब बराह क्षेत्र बांध से बाढ़ नहीं रुकेगी तब इंजीनियरों की अगली पीढ़ी इसी बहाने का उपयोग करेगी कि उनके पहले के इंजीनियरों ने जल-छाजन और वनीकरण के महत्व को नहीं समझा और उसके लिये समुचित प्रावधान नहीं किया। अभी जो भी बाढ़ नियंत्रण इस बांध से किया जायेगा वह जलाशय के नियमन से ही किया जायेगा। इसमें जल-ग्रहण क्षेत्रों के सुधार का कोई खास प्रावधान नहीं लगता।

आज जब हम यह कहते हैं कि तटबन्ध काम करते जरूर मगर बराह क्षेत्र बांध के बनने पर ही इनका पूरा उपयोग हो पायेगा तब आज से 50 या 100 साल बाद लोगों को बताया जायेगा कि बराह क्षेत्र बांध काम करता जरूर मगर यह तब तक नहीं हो पायेगा जब तक कि वनीकरण और जल-छाजन पर काम न हो। फिर जल-छाजन और वनीकरण पर काम चलेगा। मगर नदी में बाढ़ तब भी आती थी और उसकी धारा तब भी बदलती थी जब सारे के सारे जंगल सही सलामत थे। उस दिन कहा जायेगा सिल्ट/रेत इस क्षेत्र की नदियों में ज्यादा इसलिये आती है क्योंकि यह इलाका भूगर्भीय रूप से अस्थिर है। यहाँ भूकम्प आते हैं जो कि हिमालय को अस्थिर कर देते हैं, इससे भू-स्खलन होता है और नदियों में इनकी गाद भर जाती है। भू-स्खलन रोकने में जंगलों की कोई भूमिका नहीं है। जो भूकम्प हिमालय की पूरी संरचना को अस्थिर कर देते हैं वह बांध को बख्शा देंगे क्या? सच यह है कि कमाने खाने वालों को न तो कभी काम की कमी होगी और न ही बहानों की। नदियों को जोड़ने का प्रस्ताव

rivers is the most recent link in this chain of finding excuses. This leaves no doubt about the real objective of the project. Flood control will be the plank of publicity for the dam whereas the real aim will be the power generation. Now, what is the harm in owning this up ? Why raise one more hope of flood control in the minds of the people ?

The irrigation mirage

Let us now look at the claim regarding irrigation. The proposed dam is supposed to irrigate 12.17 lakh hectares of land in India and Nepal. A similar claim was made while designing the present Kosi Project in 1953. It was said at that time that 7.12 lakh hectares of land would be irrigated through this project. Later, in 1975, the Kosi Irrigation Committee (Ram Narayan Mandal Committee) averred that this estimate is totally wrong and not more than 3.74 lakh hectares of farmland can be irrigated by this project, in any case. The maximum irrigation that these canals achieved was 2.13 lakh hectares in 1983-84 and the canal has irrigated a maximum of one lakh sixty five thousand hectares in the crop seasons of recent years. Similarly, the western Kosi canal was supposed to irrigate 2.61 lakh hectares of land, according to the original plans, which was estimated to cost Rs. 13.49 Crores when the project was mooted in 1962. The canal, the foundation stone of which was laid by none other than Late Jag Jiwan Ram in 1957 and followed by many

leaders later had created an irrigation potential of just 15,120; 17,421 and 18,943 lakh hectares in the Kharif season of 1996, 1997 and 1998 respectively but the actual irrigated area was only 6,270 hectares, 9310 hectare and 9,300 hectares only. In 1999, the Bhutahi Balan breached this canal near Jhanjh Patti and since then the irrigation from the canal is in shambles. But creating irrigation potential alone is not enough, the fields should actually be irrigated. The project has spent over Rs. 462 crores till 2002 and it's estimated cost has now shot up to 830 crores (1999) which is more than 61 times of the original estimate. The Government of Bihar believes that it will complete the canal by 2004 but the pace of work at the canal is nowhere near this target. It will not be out of place to mention that an amount more than ten times of the original estimate was spent on the eastern main Kosi canals and these are still to be completed. Now, will it be any strange if the cost of the Barakhshetra dam shoots up to Rs. 3,50,000 Crores from Rs. 35,000 Crores. The present annual plan outlay of Bihar stands Rs. 3000 Crores. The Barakhshetra dam alone would eat up the entire allocation of twelve years and more than two five year plans of the state. Global Infrastructure Fund of Japan has proposals for thirteen such dams on the Kosi alone in Nepal. If these dams are built by giving a free hand to the financial institutions, a debt trap will follow. If these MNCs,

इस तरह के बहाने बाज़ी की सबसे ताज़ा तरीन कड़ी है।

वास्तव में यह बांध विद्युत उत्पादन के लिये बनेंगे और इनका बाढ़ नियंत्रण से कोई लेना-देना हो ही नहीं सकता। इनकी पब्लिसिटी जरूर बाढ़ के नाम पर होगी जिससे कि जन-समर्थन इन बांधों के पक्ष में जुटाया जा सके। सवाल इस बात का है कि अगर यह बांध विद्युत उत्पादन के लिये बनता है तो ऐसा कहने में हर्ज़ क्या है? आखिर बिजली की भी जरूरत तो हम सबको है। क्यों लोगों को एक और झूठी तसल्ली दी जाती है।

सिंचाई या भृग-नृष्णा :

अब एक नज़र सिंचाई के दावों पर डालें। प्रस्तावित बराह क्षेत्र बांध से भारत और नेपाल में 12.17 लाख हेक्टेयर ज़मीन पर सिंचाई का अनुमान है। इसी तरह का एक दावा 1953 वाली वर्तमान कोसी परियोजना प्रस्ताव में भी किया गया था। उस समय यह कहा गया था कि कोसी परियोजना से 7.12 लाख हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जायेगी। बाद में (1975) में कोसी सिंचाई समिति (राम नारायण मण्डल समिति) ने पाया कि यह अनुमान पूरी तरह ग़लत था और यह कि कोसी परियोजना से किसी भी हालत में 3.74 लाख हेक्टेयर के कृषि क्षेत्र से ज्यादा पर सिंचाई हो ही नहीं सकती। पूर्वी कोसी मुख्य नहर से सर्वाधिक सिंचाई 1983-84 में 2.13 लाख हेक्टेयर पर हुई थी और इस नहर से होने वाली सिंचाई एक लाख पैंसठ हजार हेक्टेयर की सीमा को पिछले कई वर्षों में पार नहीं कर पाई।

यही हाल पश्चिमी कोसी नहर का हुआ। जब इस योजना का प्रस्ताव पहली बार 1962 में किया गया तब उसकी अनुमानित लागत 13.49 करोड़ रुपये थी और इस से 2.61 लाख हेक्टेयर क्षेत्र पर सिंचाई का प्रस्ताव था।

इस नहर का पहला शिलान्यास जगजीवन राम ने 1957 में किया था और उसके बाद कितने ही नेताओं ने इसका शिलान्यास किया। इस नहर से 1996, 1997 और 1998 में खरीफ के मौसम में क्रमशः 15,120 हेक्टेयर, 17,421 हेक्टेयर और 18,943 हेक्टेयर क्षेत्र पर सिंचाई की क्षमता अर्जित हुई और सिंचाई हुई केवल 6,270 हेक्टेयर, 9,310 हेक्टेयर और 9,300 हेक्टेयर में। 1999 में भुतही बलान ने इस नहर को झांझ पट्टी के पास तोड़ दिया और तब से रही सही सिंचाई भी चौपट हो गई। क्षमता अर्जित कर लैने भर से तो खेत सींचे नहीं जा सकते। इस परियोजना पर 2002 तक 462 करोड़ रुपये से ज्यादा खर्च हुये थे और 1999 में इसकी अनुमानित लागत 830 करोड़ रुपये थी जो कि अपने मूल प्राक्कलन से इकसठ गुने से भी ज्यादा थी। बिहार सरकार का ऐसा विश्वास है कि यह नहर 2004 में पूरी कर ली जायेगी मगर जो काम की रफ़्तार है उसके हिसाब से नहर का काम पूरा होने में वास्तव में कितना समय लगेगा कह पाना मुशिकल है। पूर्वी कोसी मुख्य नहर के आधे-अधूरे निर्माण पर अनुमान से दस गुने से ज्यादा खर्च हुआ था और अब अगर बराह क्षेत्र बांध बनाने का काम हमारा यही नाकारा तंत्र करे और उसकी प्राक्कलित राशि 35,000 करोड़ से बढ़कर वास्तविक खर्च 3,50,000 करोड़ हो जाये तो किसी को आश्चर्य नहीं होना चाहिये। बिहार का वार्षिक बजट 3,000 करोड़ के आसपास होता है। बराह क्षेत्र बांध अकेले बिहार के पूरे बजट का बारह वर्ष का प्रावधान खा जायेगा जिसमें हमारी दो पंचवर्षीय योजनायें पूरी हो जायेंगी। जापान का ग्लोबल इन्फ्रास्ट्रक्चर फण्ड नेपाल में 13 ऐसे बांधों को बनाने का दम भरता है। यदि अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं को मनमानी करने की छूट मिल जाय तो देश कर्ज़ की गिरफ्त में फंसेगा और यदि यह खुद निर्माण के

directly intervene in construction and own the projects, the rest in anybody's guess. We just have had a glimpse of this with Enron in Maharashtra and with persuasion of Cogentrix in Karnataka.

The Power Game

As suggested earlier, the Barahkshetra dam will generate 3300 MW of hydroelectric power. At the time of partition into Bihar and Jharkhand, the combined Bihar state had a capacity to generate around 1950 MW of power and the actual generation rarely crossed 350 MW. The transmission capacity of the state was just below 1,000 MW. Why not utilize the existing capacity to the full before building a new dam or installing a new plant. And who will assure that the production at the Barahkshetra dam will not get stuck at 500 MW.

Waterlogging or Waterlocking

Some 1,82,000 hectares of land, east of the eastern Kosi embankment is waterlogged. On the western side; 94,000 hectares of land below 44.19 M contour line and 34,400 hectares above it is waterlogged. Another 1,10,000 hectares land is trapped between the two embankments. Thus about 4,20,400 hectares of land is facing floods/waterlogging in the Kosi command area. Plans for draining the waterlogged land are made from time to time but when it comes to implementation, the departments draw blank.

When the 1953 scheme of the Kosi Project was taken up for construction, it was said that the Kosi embankments will protect 2,12,000 hectares of land against floods but instead of doing that the project has drownee twice as much.

Nepal's dilemma

At least 30 schemes of damming the rivers and 60 schemes for producing hydroelectric power from the run of the river are on the anvil in Nepal. Of these 30 dams, height of 7 dams will be between 50 to 100 meters, 12 dams will have heights between 100 to 200 meters and eleven dams will have heights more than 200 meters. The power that could be produced from these dams will be 1,45,000 GWH which will suffice the needs of 700 million families of South Asian type. This work will consume 500 million tons of steel, 100 million cubic meters of concrete and 1000 million cubic meters of riprap. These structures will trap 700 million tons of silt annually and the life of the dams will be over in a period of 30 to 75 years. These dams will submerge 2200 Sq. Kms. land in Nepal which amounts to 1.5 per cent of Nepal's area and includes 20 per cent of the irrigated land there and encompasses forest/homestead lands etc. With the construction of these dams some 600,000 people will be displaced which constitute 3 per cent of the population of Nepal, whether Nepal will agree to such a proposition is a million dollar question.

क्षेत्र में उतर आये तब तो भगवान ही मालिक है। हम लोगों ने अभी हाल में ही एनरॉन के हाथों महाराष्ट्र में बिजली के दामों की तथा कर्नाटक में कोजेन्द्रिक्स की सरकार द्वारा मान-मनौवल की एक झांकी देखी है।

बिजली की आँख मिचौनी :

जैसा कि कहा जाता है कि बराह क्षेत्र बांध से 3300 मेगावाट बिजली पैदा होगी। राज्य-विभाजन के समय बिहार और झारखण्ड में इस समय 1950 मेगावाट बिजली पैदा करने की स्थापित क्षमता है, जबकि गर्मी के महीनों में बिरले ही 350 मेगावाट बिजली का उत्पादन हो पाता है। वैसे भी प्रान्त में जो बिजली की ट्रान्समिशन लाइन है वह 1,000 मेगावाट से ज्यादा बिजली का बोझ वहन नहीं कर सकती। एक नया बांध बनाने और उससे बिजली पैदा करने के पहले क्यों यह अच्छा नहीं होगा कि जो मौजूदा क्षमता है उसका समुचित उपयोग किया जाय। इसकी बात कोई क्यों नहीं करता? और इस बात की गारन्टी कौन देगा कि बराह क्षेत्र से बिजली का उत्पादन 3300 मेगावाट की जगह 500 मेगावाट नहीं होगा।

बेभाव जल-जमाव :

इसके अलावा पूर्वी तटबन्ध के पूर्व में 1,82,000 हेक्टेयर जमीन पर जल जमाव है। पश्चिमी तटबन्ध के पश्चिम में 44.19 मीटर कन्दूर लाइन के नीचे 94,000 हेक्टेयर तथा उसके ऊपर 34,400 हेक्टेयर जमीन जल-जमाव से ग्रस्त है। साथ ही दोनों तटबन्धों के बीच 1,10,000 हेक्टेयर जमीन हमेशा के लिये बाढ़ में फंसी है। इस तरह कुल मिलाकर किसी न किसी तरह 4,20,400 हेक्टेयर जमीन पानी में गई। जल-जमाव वाले क्षेत्रों में जल-निकासी की योजनायें बनती हैं, कहीं-कहीं कुछ काम भी होता है पर बाद में फिर वही ढाक के तीन

पात। जब 1953 वाली कोसी परियोजना पर काम शुरू हुआ था तब यह कहा गया था कि कोसी तटबन्धों से 2,12,000 हेक्टेयर जमीन को बाढ़ से बचाया जायेगा लेकिन ऐसा करने के बजाय परियोजना ने इससे दुगुने क्षेत्र को डुबाने का काम किया है।

नेपाल की अपनी परेशानियाँ :

फिलहाल नेपाल में 30 बांधों के निर्माण का तथा 60 ऐसी जल-विद्युत परियोजनाओं के निर्माण का प्रस्ताव है जिनमें नदी को बिना बांधे, उसके प्रवाह से ही बिजली पैदा की जायेगी। इन तीस बांधों में से 7 बांधों की ऊँचाई 50 से 100 मीटर के बीच है, 12 बांधों की ऊँचाई 100 से 200 मीटर के बीच में और 11 बांधों की ऊँचाई 200 मीटर से ज्यादा होगी। इन योजनाओं से 1,45,000 गीगा वाट ऑवर बिजली पैदा हो सकेगी जिससे दक्षिण एशिया में बसने वाले जैसे 70 करोड़ परिवारों की बिजली की जरूरतें पूरी हो सकेंगी। इस काम में 50 करोड़ टन लोहा, 10 करोड़ घनमीटर कंक्रीट और 100 करोड़ घन मीटर पत्थरों का इस्तेमाल होगा। इन बांधों में प्रतिवर्ष 70 करोड़ टन रेत/ मिट्टी हर साल जमा होगी और इनका जीवन काल 30 से 75 वर्ष का होगा। इन बांधों में नेपाल की 2,200 वर्ग किलोमीटर जमीन डूबेगी जो कि नेपाल की कुल जमीन का 1.5 प्रतिशत है और इसमें वहाँ की 20 प्रतिशत सिंचित कृषि भूमि भी डूब जायेगी। डूब क्षेत्र में जंगल और गाँव भी शामिल हैं। इन बांधों के निर्माण से करीब 6,00,000 लोग विस्थापित होंगे जो कि नेपाल की कुल आबादी का 3 प्रतिशत है। क्या इन कीमतों पर नेपाल अपने यहाँ बांध निर्माण करवायेगा—यह एक यक्ष-प्रश्न है।

नेपाल में अरुण नदी पर बने अरुण-III बांध का एक अनुभव हमारे

The experiences of the Arun-III, dam constructed over one of the tributaries of the Kosi, do not give any encouraging signals. This 68 meters high and 115 meters long dam on one of the tributaries of the Kosi, the run was expected to produce 201 MW of power, in the first phase, at an estimated cost of US 1082 million dollars and was supposed to get financial assistance from the World Bank, Asian Development Bank, Germany, France and Sweden etc. While the construction of the Arun-III started in 1992, a debate ensued between the intellectuals / activists in Nepal towards the justification of the project. They felt that the scheme would not benefit Nepal and the donor countries are bent upon defending their business interests and pushing Nepal into a debt trap. They also felt that Nepal would not get her share even in employment for the labour and that the hydro-power produced will be so costly that it will be beyond the purchasing power of the Nepalese consumer. They apprehended that the cost of power produced will be as much as an American consumer pays for it in his country and twice as much for its Indian counterpart. And if the cost were that high, the Indians will not purchase the power which was the primary purpose behind the construction of the dam.

Where do we stand now ?

The overall scene with the proposed dams in Nepal

is quite confusing. As far as its implications in India are concerned, there is no information available here about these proposed dams and one has to depend on the literature emanating out of Nepal about them. What we get here is the Nepalese version of the interpretation of the proposals and the debate which should take place here is, actually, missing. There are concern about the structural safety of these proposed dams as, for example, the Barahakshetra dam alone is going to store water that is enough to spread a sheet of 30 Cms. depth over entire North Bihar. Displacement, though it does not concern India, is going to be a tricky issue in the backdrop of Sardar Sarovar, Subarnrekha or Tehri dams. Financial viability of these projects and their gestation period is also a problem. We are also worried about the performance of our own large irrigation and flood control schemes of Bihar and only hope that their shadow is not cast over the proposed structures in Nepal. Besides, despite best efforts, the construction is unlikely to be completed within less than 12-15 years and do not seem we to have any contingency plan ready for this interim period. In the absence of such plans, one will have to rely solely on the flood moderation that will be available only after the construction of the Barahkshetra dam. The Secretary of the Department of Water Resources, Government of Bihar, in a meeting in the Water Resources Development Centre at Patna, on the

पास है और उसके नतीजे कुछ उत्साहवर्धक नहीं हैं। कोसी की सहायक धारा पर बन रहे 115 मीटर लम्बे और 68 मीटर ऊँचे, प्रथम चक्र में 201 मेगावाट क्षमता वाले अरुण-III बांध की प्राक्कलित राशि 108.2 करोड़ अमरीकी डॉलर थी और इस काम में विश्व बैंक, एशियन डेवलपमेंट बैंक, जर्मनी, फ्रान्स तथा स्वीडेन की सरकारें मदद कर रही थीं। इस बांध का काम जब 1992 में शुरू हुआ तब नेपाल में बुद्धिजीवियों तथा सक्रिय समूहों में बहस छिड़ गई कि इस परियोजना का औचित्य है भी या नहीं। उन लोगों का मानना था कि इस परियोजना से नेपाल को फायदा नहीं होगा और दाता संस्थायें अपने-अपने व्यापारिक हितों का पोषण करने के लिये नेपाल को कर्ज के गर्त में डकेल रही हैं। इन लोगों का यह भी मानना था कि नेपाल को रोजगार के क्षेत्र में भी कोई लाभ नहीं होने वाला है तथा योजना से पैदा होने वाली बिजली इतनी मंहगी होगी कि नेपाली उपभोक्ता उसका खर्च वहन ही नहीं कर पायेगा। उनकी आशंका थी कि इस बिजली की कीमत लगभग वही होगी जो कि एक अमरीकी उपभोक्ता अपने देश में अदा करता है और भारतीय उपभोक्ता जिस दर से बिजली का भुगतान करता है, यह बिजली उससे दुगुनी मंहगी होगी। अगर ऐसा होता है तो भारत यह बिजली खरीदेगा ही नहीं जबकि बांध इसी उम्मीद पर बन रहा था कि भारत यह बिजली ले लेगा।

अभी हम कहाँ हैं :

नेपाल में प्रस्तावित इन बांधों के बारे में भारत में कोई जानकारी उपलब्ध नहीं होती। जो कुछ भी जानकारी मिलती है वह नेपाल से प्रकाशित होने वाली पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं और समाचार पत्रों से ही मिलती है। हमारे पास जो भी सूचनायें आती हैं वह इन योजना प्रस्तावों पर नेपाली जनता या बुद्धिजीवियों

की टिप्पणी की शक्ति में ही मिलती हैं और इन योजनाओं पर जो कुछ भी बहस होनी चाहिये वह यहाँ हो ही नहीं पाती है। हमारी बांध की सुरक्षा के प्रति दुःश्चिन्ता हो सकती है क्योंकि अकेले बराह क्षेत्र बांध में इतना पानी संचित किया जा सकता है जिससे पूरे ऊत्तर बिहार पर एक फुट मोटी पानी की चादर बिछाई जा सके। प्रस्तावित बांध के कारण होने वाली विस्थापन और पुनर्वास की समस्या, यद्यपि इससे हमारा कोई सीधा सम्बन्ध नहीं है, एक बड़ा ही पेचीदा मामला है। हमारे यहाँ ही नर्मदा घाटी के बांधों, सुवर्णरेखा या टेहरी परियोजनाओं में विस्थापन के प्रश्न पर योजनाओं के कार्यन्वयन पर बुरा असर पड़ा है। इन परियोजनाओं की आर्थिक दक्षता और उनके पूरा होने में अनुमान से ज्यादा लगने वाला समय अपने आप में एक समस्या है। बिहार में हमारे खुद की सिंचाई और बाढ़ नियंत्रण की परियोजनाओं की उपलब्धियाँ सभी के लिये चिन्ता का विषय बनी हुई है और केवल क्षीण सी आशा है कि इस पूरे अकर्मण्य तंत्र की छाया नेपाल में प्रस्तावित बांधों पर नहीं पड़ेगी।

इसके अलावा, बांध, कितनी ही दक्षता और फुर्ती से बनाया जाय, इसके निर्माण में 12 से 15 वर्ष का समय अवश्य लग जायेगा। इस अन्तरिम समय में बाढ़ का मुकाबला करने की कोई योजना हमारे पास है क्या? या फिर यह समय बराह क्षेत्र बांध के निर्मित हो जाने के आश्वासन पर ही कट जायेगा? बिहार के जल-संसाधन सचिव ने 2 मार्च 2002 को पटना विश्वविद्यालय के वाटर रिसोर्स डेवलपमेंट सेन्टर में अपने एक भाषण के दौरान बताया कि उन्हें आने वाले 50-60 वर्षों में इस बांध के निर्माण की कोई उम्मीद नहीं है। इसमें यदि थोड़ी सी भी सच्चाई है तो मामला और भी गंभीर हो जाता है।

इस इलाके में बाढ़ की समस्या के पीछे नदियों में आने वाली अत्यधिक

2nd March 2002, had stated that the possibility of this dam being constructed in coming 50-60 years is very remote. If there is any grain of truth in this statement, the situation is going to be very serious in future.

Beside, the World Commission of Dam Report, published in November 2002, has given a set of guidelines to be followed in future projects of dam construction to ensure equity, efficiency, accountability, participatory approach in decision, making process and sustainability. Central Water Commission of the Government of India has squarely rejected this report but many financial institution have accepted the recommendations of this report. Nepal has accepted these recommendations and in that case, any proposal to construct a dam in Nepal will undergo thorough scrutiny and this will create problems for those who treat the dam building process in Nepal a cake walk.

The basic reason behind the flood is the sediment load of the rivers and the proposed dam is going to do precious little in reducing that problem. The engineers know how to route water but they are yet to develop technology that will route sediments at cheaper costs. Ask any villager and he will tell how floods used to come, water used to spread all over along with the silt and there was a moderation of sorts as the flood water used to be spread over a large area. If the floods were unprecedented, Kharif crop would

be lost but a bumper Rabi crop would follow and the land building by the rivers would continue as usual. The developmental processes have complicated the flood scene. Now, instead of draining the rain water from their catchments, the rivers are spreading it into the same.

Can we give a whole new look to the problems faced by us. Instead of depending on the proposed large dams, should we not think of dealing with the floods locally and delink the flood problem from the proposed dams, once for ever, because such dams have never controlled the floods in past, nor will they be able to do it in future. So far, only a lip service has been paid to the concept of 'living with the floods'. Can we shed the arrogance of controlling everything that comes our way and, instead, live in peace with it. Can we think of 'flood tolerant houses' instead of 'flood resistant houses' and can't we think of 'flood tolerant cropping pattern' instead of 'flood resistant crops'. If these questions can be answered in affirmative, our attitude towards floods will change and the large dams will come in for a scrutiny by the common people.

Many exemplary experiments have been made in the country in the drought prone areas but the flood prone areas are still waiting for 'messiah' to come. The only constraint is that in drought prone areas, a village can be dealt with in isolation whereas in the flood prone areas it has to be

गाद की मात्रा है और यह प्रस्तावित बांध गाद को रोकने की दिशा में कुछ भी नहीं कर पायेगा। दिक्कत यह है कि इंजीनियरों को पानी के साथ क्या करना है यह तो मालूम है पर उसके साथ आने वाली मिट्टी का क्या करना है, इसका कोई सस्ता समाधान निकालने की विद्या अभी तक नहीं आती है। बाढ़ वाले क्षेत्र के किसी भी ग्रामीण से पूछिये तो वह आप को बतायेगा कि कैसे पहले बाढ़ का पानी आता था, चारों ओर फैलता था, खेतों पर नई मिट्टी पड़ती थी और ज्यादा से ज्यादा दो ढाई दिन के अन्दर बड़ी से बड़ी बाढ़ समाप्त हो जाती थी। अगर कभी असाधारण सी बाढ़ आ गई और खरीफ की फसल पूरी तरह चौपट हो गई तो रबी की एक ज़बर्दस्त फसल इस नुकसान की भरपाई कर देती थी। बड़े इलाके पर गाद फैलने के कारण उसके लिये अलग से कोई व्यवस्था नहीं करनी पड़ती थी और नदी भूमि निर्माण का अपना काम बिना किसी रुकावट के पूरा करती थी। अनियंत्रित विकास की प्रक्रिया ने बाढ़ों के स्वरूप को विकृत कर दिया है। बाढ़ का इंजीनियरिंग समाधान कर के हमने नदियों को सच्चे मामले में विनाशकारी बना दिया है। अब वह अपने स्वाभाविक धर्म—जल-ग्रहण क्षेत्र के पानी की निकासी के बदले उसमें पानी फैलाने का काम कर रही हैं।

इसके अलावा नवम्बर 2000 में विश्व बांध आयोग द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट में भविष्य में बनने वाली बांध परियोजनाओं में ऐसी व्यवस्था होनी चाहिये कि इन योजनाओं से होने वाले लाभ का बराबर का बटवारा, निर्माण और संचालन में दक्षता, जवाबदेही, निर्णय लेने की प्रक्रिया में आम लोगों की भागीदारी तथा टिकाऊपन सुनिश्चित हो सके। भारत सरकार के केन्द्रीय जल आयोग ने विश्व बांध आयोग की रिपोर्ट को एक सिरे से खारिज कर दिया है मगर बहुत सी अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थानों ने इस रिपोर्ट की सिफारिशों को स्वीकार किया है।

नेपाल सरकार द्वारा इस रिपोर्ट को स्वीकार कर लिया हुआ है और अगर वह इसे स्वीकार कर लेती है तो नेपाल में बड़े बांधों के निर्माण पर व्यापक बहस होगी। इस स्वीकृति से वहाँ बांधों के निर्माण में मुश्किलें जरूर बढ़ेंगी।

तब क्या यह जरूरी नहीं है कि बाढ़ों पर एक नई दृष्टि डाली जाय। बड़े-बड़े बांधों पर निर्भर करने के बदले क्या हम ऐसा नहीं कर सकते कि पानी को गाँवों तक आने दिया जाय और स्थानीय स्तर पर उनसे निबटा जाये और एक बार और हमेशा के लिये बड़े बांधों और नदियों की बाढ़ के रिश्तों को समाप्त कर दिया जाय क्योंकि ऐसे बांधों की मदद से बाढ़ न तो पहले कभी रुकी है और न ही भविष्य में कभी रुक पायेगी। हमने बाढ़ों के साथ जीवन निर्वाह की विधा को अभी तक केवल बात चीत के स्तर तक ही सीमित रखा है। जो कुछ भी हमारे सामने पड़ता है—क्या हम उसको अपने कब्जे में कर लेने की धींगा-मुश्ती से बाज आयेँगे। क्या हम बाढ़-रोधी घरों के स्थान पर बाढ़ को बर्दाश्त कर लेने वाले घरों के बारे में सोच सकते हैं। क्या हम बाढ़-विरोधी फसलों के बदले बाढ़ बर्दाश्त करने वाली फसलों को उगाने का प्रयास करेंगे। अगर इन प्रश्नों का उत्तर सकारात्मक है तो प्रस्तावित बांध, जहाँ तक बाढ़ नियंत्रण का प्रश्न है, अपने आप आम जनता द्वारा पुनरीक्षण के दायरे में आ जायेगा।

पूरे देश में सूखा प्रवण क्षेत्रों में विकास के बहुत से सफल प्रयोग हुये हैं मगर बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों को आज भी एक 'मसीहा' का इन्तज़ार हैं। अन्तर केवल इतना ही है कि सूखा-प्रभावित क्षेत्रों में दो-एक गाँवों को लेकर विकास का काम किया जा सकता है जब कि बाढ़ वाले क्षेत्रों में यही काम क्षेत्रीय स्तर पर या कुछ गाँवों के समूह को लेकर ही करना पड़ेगा। यह जरा मंहगा मुकाम है मगर इस पर काम होना चाहिये।

a regional or cluster approach. This is a bit costly proposition but attempts in this direction will pay dividends in future.

Similarly, can we do something with the irrigation or, at least, review the performance of what has been done during the plan period. The area that is being irrigated by the eastern main canal of the Kosi project is less than the area which the people were irrigating through their own traditional sources in the command area of the canal. Does that not suggest that the investment in the irrigation sector in this part of the country has not only gone to waste but it has also rendered a sizable amount of land, a swamp. As a matter of fact, the areas where the ground water table is already high, canals should not have been built in the first place. Is it not the time for us to think of the revival of the traditional system of irrigation over which the society exercises a better control and one does not run the risk of dilapidated canal, sand casting on the fields and the irrigation personnel going on a strike for the fulfilment of their demands when the irrigation demand is at its peak.

If it is only the energy for which the dams are a necessity, then there is a need to review the energy needs, the performance of all the existing power plants and all the possible means of producing and saving energy and then to ascertain whether the dams of the sizes that are gaining currency are the only choice left. We have seen two major

foundation laying ceremonies of power plants in Bihar in past few years. Foundation stones for the Barh Thermal Power Station (Capacity 2,000 MW) and the Pusauli (500 MW) were laid during this period. These power plants will produce 2,500 MW of power and the states power requirements in 2025 are reported to be only 2750 MW. If these plants start functioning and we improve our existing production capacity, we do not need the dam at Barahkshetra. Most of the large dams are built to produce power, using the planks of irrigation or flood control for the poor. It is the poor who are deprived of the power, if one looks at the priorities in the distribution of power between the urban and rural population.

A nationwide debate is the need of the hour in case of the dams proposed in Nepal. It should encompass the aspects of the environment, dependability, structural safety, costs, gestation period, displacement-although it does not concern us directly but may turn out to be of grave concern later, cost price of the power to the Indian consumer, etc. together with the role of the financial institutions, multinational companies and other actors who are pushing these proposals. It will also be essential to review the performance of the present Kosi Project in the back-drop of its stated objectives. People should have reasons to believe the planners before a new and such a costly a venture is taken up.

इसी तरह से क्या हम सिंचाई के लिये भी कुछ कर सकते हैं. कम से कम हम योजना काल के अपने सिंचाई प्रकल्पों का एक मूल्यांकन कर लें। पूर्वी कोसी मुख्य नहर से जितनी सिंचाई आज होती है उससे ज्यादा योजना बनने से पहले कोसी कमाण्ड में लोग भूमि पर सिंचाई अपने दम पर कर लिया करते थे। इससे क्या वह सबक नहीं मिलता कि देश के इस हिस्से में सिंचाई के क्षेत्र में किया गया निवेश न केवल बड़े खाते में चला गया वरन् काफी बड़ा क्षेत्र जल-जमाव की भेंट चढ़ गया। दर-असल पहले से ही भूमिगत जल ऊपर रहने वाले इलाके में नहरों से सिंचाई का प्रयोग ही नहीं होना चाहिये था। अब समय आ गया है कि हम अपने पारम्परिक सिंचाई के साधनों की पुनर्स्थापना आधुनिक मगर जन-विज्ञान के जरिये करने का प्रयास करें क्योंकि वह सुनिश्चित था और उसमें अपने संसाधनों को समाज अपने नियंत्रण में रखता था। इसमें न तो बड़ी नहरों के टूटने का खतरा है और न ही मरम्मत न होने के कारण उनसे सिंचाई बंद होने का डर रहता है। इन स्रोतों पर बालू भी नहीं पड़ता है और न ही ऐन मौके पर इंजीनियरों के हड़ताल पर जाने का खतरा रहता है जबकि सिंचाई की मांग अपने चरम पर हो।

अगर यह बांध केवल बिजली की जरूरतों को पूरा करने के लिये बनाए जा रहे हैं तब इस बात की जरूरत है कि हम अपनी बिजली की मांग का अध्ययन कर लें। अपने मौजूदा बिजलीघरों की कार्य क्षमता बढ़ाना, बिजली पैदा करने की सारी संभावनाओं को तलाश करना और उसका दुरुपयोग रोकना आदि कुछ ऐसे मुद्दे हैं जिन पर गम्भीरता से विचार होना चाहिये और जिस तरह के बांध को बनाने की बात चल रही है वह तभी बने जब कि उस के अलावा कोई चारा न बचा हो। पिछले कुछ वर्षों में बिहार में दो बड़े ताप बिजली घरों बाढ़

और चतरा बिजली घर (क्षमता 2,000 मेगावाट) और पुसौली ताप बिजली घर (क्षमता 500 मेगावाट) की नींव रखी गई है। इन दोनों बिजली घरों से कुल मिलाकर 2,500 मेगावाट बिजली उपलब्ध हो सकेगी जबकि राज्य की सन् 2025 की बिजली की मांग 2750 मेगावाट होने का अनुमान है। अगर यह बिजली घर काम करने लगें और अगर हम कांटी बरौनी और कहलगाँव की अपनी वर्तमान क्षमता को सुधार सकें तो विद्युत उत्पादन के लिये भी बराह क्षेत्र बांध की जरूरत नहीं पड़ेगी। अधिकांश बड़े बांध विद्युत उत्पादन के उद्देश्य से बनते हैं। हाँ, इनका प्रचार-प्रसार सिंचाई या बाढ़-नियंत्रण के नाम पर अवश्य होता है। यह बांध गरीबों और उनके विकास की दुहाई देकर बनते हैं। मगर बांध बनने के बाद की प्रार्थमिकताओं का अगर अध्ययन किया जाय तो यह गरीब ही होते हैं जो कि पीछे छूट जाते हैं।

नेपाल में प्रस्तावित बांधों पर एक राष्ट्रव्यापी बहस की जरूरत है जो कि पर्यावरण, सरचनात्मक सुरक्षा, लागत, निर्माण पूरा करने का समय, विस्थापन या पुनर्वास-यद्यपि यह मुद्दा सीधे हम को प्रभावित नहीं करता है मगर निर्माण कार्य को बहुत प्रभावित कर सकता है, और भारतीय उपभोक्ता को मिलने वाली बिजली और उसकी कीमत आदि विषयों को समेटे। बहस अन्तर्राष्ट्रीय दितीय संस्थाओं की भूमिका पर भी होनी चाहिये और बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ क्यों, इन योजनाओं में इतनी ज्यादा रुचि ले रही हैं, वह भी सार्वजनिक किया जाना चाहिये। जरूरी है कि वर्तमान कोसी परियोजना का भी मूल्यांकन उसके कथित उद्देश्यों की पृष्ठभूमि में किया जाय। लोगों के पास योजना बनाने वालों की बातों पर विश्वास करने का समुचित कारण होना चाहिये क्योंकि जिन योजनाओं की बात चल रही है वह बहुत ही मंहगी हैं।

BARH MUKTI ABHIYAN

Barh Mukti Abhiyan was established in 1991 with a view to initiate the flood debate amongst the politicians, bureaucrats, engineers, concerned citizens and the common man.

Floods in Bihar have acquired menacing proportion following the embanking of the rivers which has led to severe dislocations in the society. The planners do not take notice of these aberrations and a myth has been created that the problem of floods and its' solution is purely technical one, and should be handled only by those who are technically competent. Barh Mukti Abhiyan is trying to explode this myth and wants the floods be widely debated.

BARH MUKTI ABHIYAN

Near.P.T.C. Chowk, Hazaribagh-825 301 (JHARKHAND)
Phone : (06546) : 263530, Fax : (06546) 224990

बाढ़ मुक्ति अभियान

पी० टी० सी० चौक के निकट, हजारीबाग - 825 301 (झारखण्ड)
फोन : (06546) 263530, फैक्स : (06546) 224990

बाढ़ मुक्ति अभियान

बिहार की बाढ़ समस्या पर आम जनता, बुद्धिजीवियों, राजनीतिज्ञों, इंजीनियरों, प्रशासकों तथा अन्य सहृदय पक्षों के बीच बहस की शुरुआत करने के उद्देश्य से 1991 में बाढ़ मुक्ति अभियान ने काम करना शुरू किया।

नदियों पर तटबंधों के निर्माण के साथ-साथ बिहार में बाढ़ के कारण तबाही बढ़ी है और समाज में भाँति-भाँति की विकृतियाँ आयी हैं। इन विसंगतियों से नीति निर्धारण करने वाले सक्षम लोग अपरिचित ही रहे हैं और एक भ्रम पैदा कर दिया गया है कि बाढ़ या जल-जमाव एक तकनीकी समस्या है और इसका समाधान उन्हीं लोगों को करना चाहिये जो इसके लिए अधिकृत हैं। बाढ़ मुक्ति अभियान इस मिथक को तोड़ना चाहता है तथा बाढ़ पर एक व्यापक बहस चाहता है।

सम्पर्क पता / Contact Address

BARH MUKTI ABHIYAN

Road No. - 6B, Rajeev Nagar, Patna - 800 024 (BIHAR)
Phone : (0612) 2551811 (P.P.), (0657) 2362520
e-mail : mishradk@satyam.net.in

बाढ़ मुक्ति अभियान

रोड नं० - 6बी, राजीव नगर, पटना-800 024 (बिहार)

For Limited Circulation Only केवल सीमित प्रसार हेतु

Suggested Contribution Rs. 10/- only सहयोग राशि-दस रुपये मात्र

बाढ़ मुक्ति अभियान के लिए रामेश्वर सिंह द्वारा प्रकाशित तथा लोकवाणी प्रिंटिंग प्रेस, डी०एन० दास लेन, लंगरटोली, पटना-800 004 में मुद्रित।
Published by Rameshwar Singh for Barh Mukti Abhiyan and Printed at Lokvani Printing Press, D. N. Das Lane, Langartoli, Patna-800 004.

जून 2003
June 2003